

# Mahashivaratri Puja

Date : 23rd February 1990  
Place : Pune  
Type : Puja  
Speech : Hindi  
Language

## CONTENTS

### I Transcript

Hindi	02 - 10
English	-
Marathi	-

### II Translation

English	11 - 16
Hindi	-
Marathi	17 - 25

# ORIGINAL TRANSCRIPT

## HINDI TALK

आज शिवरात्री है और शिवरात्री में हम शिव का पूजन करने वाले हैं। बाह्य में हम अपना शरीर है और उसकी अनेक उपाधियाँ, मन, अहंकार बुद्धि आदि हैं और बाह्य में हम उसकी चालना कर सकते हैं, उसका प्रभुत्व पा सकते हैं। इसी तरह में जो कुछ अंतरिक्ष में बनाया गया है, वह हम सब जान सकते हैं, उसका उपयोग कर सकते हैं। उसी प्रकार इस पृथ्वी में जो कुछ तत्व हैं और इस पृथ्वी में जो कुछ उपजता है उन सबको हम अपने उपयोग में ला सकते हैं। इसका सारा प्रभुत्व हम अपने हाथ में ले सकते हैं। लेकिन ये सब बाह्य का आवरण है। वो हमारी आत्मा है, शिव है। **जो बाह्य में है वो सब नश्वर है।** जो जन्मेगा, वो मरेगा। जो निर्माण होगा उसका विनाश हो सकता है। किन्तु जो अन्तरतम में हमारे अन्दर आत्मा हैं, जो हमारा शिव है, जो सदाशिव का प्रतिबिम्ब है, वो अविनाशी है, निष्काम, स्वक्षन्द। किसी चीज़ में वो लिपटा नहीं, वो निरंजन है। उस शिव को प्राप्त करते ही या उस शिव प्रकाश में आलोचित होते ही हम भी धीरे-धीरे सन्यस्त हो जाते हैं। बाह्य में सब आवरण है। वो जहाँ के तहाँ रहते हैं। लेकिन अन्तरतम में जो आत्मा है वो अचल, अटूट और अविनाशी है वो हमेशा के लिए अपने स्थान पर प्रकाशित होते रहता है। तब हमारा जीवन आत्मसाक्षात्कार के बाद एक दिव्य, एक भव्य, एक पवित्र जीवन बन जाता है। इसलिए मनुष्य के लिए आत्मसाक्षात्कार पाना अति आवश्यक है। उसके बगैर उसमें सन्तुलन नहीं आ सकता, उसमें सच्ची सामूहिकता नहीं आ सकती, उसमें सच्चा प्रेम नहीं आ सकता। और सबसे अधिक तो उसमें सत्य ही जाना नहीं जा सकता। सो सारा ज्ञान, जिसे कि शुद्ध ज्ञान कहा जाता है, जिसे कि विद्या कहा जाता है, वो इस आत्मा के ही प्रकाश में जानी जा सकती है, जब मनुष्य इस आत्मा के प्रकाश से आलोचित हो जाता है, तो उसका देखना भी निरंजन हो जाता है। वो देखना मात्र होता है। कोई चीज़ को देखते वक्त उसमें कोई उसकी प्रतिक्रिया नहीं होती है, देखता है और देखने से ही पूरा ज्ञान हो जाता है उस चीज़ का कि यह चीज़ क्या है।

तो, मनुष्य हमेशा जब आत्मसाक्षात्कार से प्लावित नहीं होता तो वो एक तरह से अपने ही बारे में सोचता रहता है। वो यही सोचता है कि मैं आज क्या खाना खाऊँगा, क्या किसके यहाँ बड़ा अच्छा खाना मिला था। आज कौन से खाने का इन्तजाम करें। नहीं तो फिर वो ये सोचता है कि आज मुझे कहाँ जाना चाहिए, कौन सी जगह मेरा महत्व होगा, कौनसी जगह मुझे लोग मानेंगे, कौनसी सभा में मैं जाकर चमकूँगा। तीसरा सोचेगा कि मैं कौनसा कार्य करूँ जिसके कारण मैं बहुत रुपया इकट्ठा कर लूँ, बहुत मेरे पास पैसा आ जाए। संसार की सारी सम्पत्ति मैं पा लूँ और सारी दुनिया को मैं ठीक कर लूँ। चौथा सोच सकता है कि कितने मेरे बच्चे हैं, और इनके लिए मुझे क्या करना चाहिए और मेरे बच्चों के बच्चों के लिए क्या करना चाहिए और मेरे रिश्तेदार हैं, उनके लिए मुझे क्या करना चाहिए। इस प्रकार के जो कुछ सारे विचार हैं, यह अपने में लक्षित हैं, कि उसमें मेरा क्या स्थान है। मैं कहाँ हूँ। मेरा उसमें कौनसा विशेष लाभ होने वाला है। मैं आज कौनसे कपड़े पहनूँगा। मैं आज किसको किस तरह से प्रभावित करूँगा। मैं आज कौनसी बात कहूँगा जिससे सब लोग अचंभा में पड़ जाएं। मैं कौनसी कोई ऐसी तरकीब दिखाऊँगा जिससे लोग सोचें कि क्या यह आदमी है! कितना बढ़िया, कितना होशियार, कितना चमत्कारपूर्ण।

दूसरा जो है वो अपने को बहुत नम्रतापूर्वक सबके सामने बार-बार झुक-झुक के नमस्कार करेगा, ये दिखाने के लिए कि मैं बड़ा नम्र हूँ और मैं सबसे बड़े आदर से रहता हूँ। मैं बहुत ज्यादा संस्कृति से भरपूर हूँ। कोई तीसरा कहेगा कि मैं

विद्यवान की सभा में जाकर वाद-विवाद करूँगा। मैं बहुत सारी किताबें पढ़ूँगा, उससे मैं अपनी बुद्धि को बड़ा प्रबल कर लूँगा। मैं बुद्धि से, अपने को ऐसे विशेष रूप में प्रकाशित करूँगा कि लोग सोचेंगे कि कितना बड़ा लेखक है, कि कितना बड़ा वक्ता है, कितना बड़ा बोलने वाला है। फिर इसी प्रकार कोई अपने संगीत के बारे में सोचता है, तो कोई अपने कला के बारे में सोचता है। हर चीज़ में आदमी अपने बारे में सोचता है कि मेरी प्रगति कैसी होगी, उससे मैं क्या करूँगा। और बहुत से समाज कार्य भी लोग करते हैं, ये नहीं कि नहीं करते हैं। जैसे कि कोई आदमी अगर डूब रहा है तो उसको बचाने के लिए जो कोई आदमी कूदता है, तो वो भी यही सोच के कि उसके अन्दर जो कुछ 'मैं' है, वह उस आदमी में भी है, इसलिए वह उसको बचाता है। उसको अहसास नहीं होता कि आदमी डूब रहा है इसलिए उसको बचाया है। और उससे भी ऊँचे कार्य मनुष्य करता है। अपने देश के लिए बहुत त्याग करता है, इसलिए कि ये मेरा देश है। मेरे देश के लोगों को सुख मिलना चाहिए। इस तरह से उसमें भव्यता आने लगती है। उसमें महानता आने लगती है। फिर कोई सोचता है कि मेरी जो कला है, वो ऐसी फैलनी चाहिए कि विश्व में हमारे देश की कला फैले। इस तरह से मनुष्य थोड़ा-थोड़ा सा अपने को सामूहिकता में घूलते देख कर खुश होता है। पर उस सब में अपेक्षित होता है कि उसे विजय मिले, उसका यश गान हो, लोग उसकी वाह, वाह करें, यह अपेक्षित रहता है। इसलिए वह सुख और दुःख के चक्कर में फँस जाता है। यह अपेक्षित रहता है कि उसका नाम सब पर छपे, लोग उसको बहुत माने और उसकी बड़ी मान्यता रखें और कहीं भी वो खड़ा हो, तो कभी भी वो अपमानित न हो। कोई उसको किसी भी तरह से नीचा न करें। कोई भी कितना भी बड़ा संयोजक हो, गर वो आत्मसाक्षात्कारी नहीं है तो उसमें उसका जो बिन्दु आप अपना है, 'मैं' हूँ जो 'मैं' का बिन्दु है, वो कितना भी बड़ा उसका परिधि बन जाए, पर उसका चित्त उस 'मैं' पर ही रहता है। उस परिधि में उसका चित्त नहीं जाता।

किन्तु जब वह अपने आत्मा से एकाकारिता प्राप्त करता है, तब वह और तरह से बात सोचता है तब वह इस तरह से सोचता है कि इसका उपयोग समाज के लिए कैसे हो सकता है, दुनिया के लिए कैसे हो सकता है। इस आंतरिक पीड़ा के जो लोग हैं, इनके लिए क्या हो सकता है, दुनिया के लिए क्या करना चाहिए। उसका सारा ही विचार अपने से बदल के, उन चीज़ों की ओर जाता है। जब किसी पेड़ को देखता है, उस पेड़ को देखते ही वह सोचता है विधाता ने कितना सुन्दर यह पेड़ बनाया हुआ है। काश! कि मैं भी ऐसा सुन्दर होता। काश! कि मैं भी ऐसा छायाप्रद होता कि लोग मेरे छाया में आकर बैठते। किन्तु मैं ऐसा नहीं। मुझे ऐसा ही होना चाहिए। उस पेड़ की स्तुति में वो गाने लग जाए। किसी हिमालय को देखेगा, तो वो हिमालय की ही स्तुति गाता रहेगा। लेकिन जो मनुष्य आत्मनिष्ठ नहीं होता है, **जो अपनी आत्मा को जानता नहीं वह हमेशा अपनी ही स्तुति गाता रहता है**, कि मैं हिमालय पर गया था, मैंने हिमालय पर ये काम किया। हिमालय में मेरी कब्र बना देना। हिमालय पर मेरा झंडा गाड़ देना, हिमालय पर मेरे देश का झंडा लगा देना। इस प्रकार एकदम दो तरह के लोग होते हैं। एक जो कि आत्मसाक्षात्कारी हैं, आत्मा के प्रकाश में अपने को सारी चीज़ों की ओर दृष्टि डालते वक्त एक व्यापकता से देखते हैं और दूसरी बात कि उनमें यह कभी धारणा नहीं होती कि यह कार्य करने से मेरा नाम बढ़ जाए, या मेरा यशगान लोग करें। कोई लोग उन्हें मार भी डाले, सताए, छले, या चाहे कोई उनकी बुराई करे, वो कभी भी इस चीज़ का बुरा नहीं मानते। जैसे कि आप देख सकते हैं कि ईसामसीह को सूली पे चढ़ाया गया था। सूली पर चढ़ते वक्त उन्होंने एक प्रार्थना की कि, 'हे जगदीश, ये लोग जानते ही नहीं कि ये लोग क्या गलती कर रहे हैं। इनको तुम माफ कर दो।' क्योंकि उनको यही फिक्र थी कि मुझे इतना इन लोगों ने सताया तो न जाने इनका क्या हाल होगा। तो ऐसा **जो आत्मसाक्षात्कारी होता है वह निस्पृह होता है**। उसके अन्दर किसी प्रकार का खिंचाव नहीं रहता कि यह चीज़ होनी ही चाहिए, यह बनना ही चाहिए, वो संकल्प नहीं करता। हो जाएगा तो अच्छा, और नहीं हो जाएगा तो भी अच्छा और जब

वो किसी यश और जय को वरण नहीं करता है, उसकी अपेक्षा ही नहीं करता है, तो उसको सुख और दुःख का चक्कर आता नहीं। सुख और दुःख में वो समान हो जाएगा। कोई दुःख आया तो उसे भी देख सकता है, सुख आया तो उसे भी देख सकता है और वो समझता है कि यह रात और दिन का मामला है। खुद वह स्वयं आनन्द में विभोर है क्योंकि **आत्मा आनन्द का ही स्रोत है**। आनन्द के स्रोत में विभोर हो वह किसी भी चीज़ की लालसा नहीं करता। उसको कभी किसी चीज़ की लालसा होती ही नहीं कि इसकी चीज़ को ले लूँ, खसोट लूँ कि इसको ये कर लूँ। उसके दिमाग में यह बातें आती ही नहीं। उसको कभी भी अपने मन को 'कंट्रोल' (काबू) ही नहीं करना पड़ता। वो कहते हैं कि अपने मन व अपने इन्द्रियों को कंट्रोल करिए। वो पूरा कंट्रोल हो जाता है। उसको कोई लालसा नहीं होती, कि ये चीज़ मुझे चाहिए ही और अब उसके लिए प्राण लगा रहे हैं। लोग हैं कि कोई नई चीज़ के प्रलोभन में इस तरह से दौड़ते हैं कि जैसे उनके लिए वह ही सब कुछ जिन्दगी है और जब वह चीज़ मिलती है, उसके बाद फिर दूसरे चीज़ के लिए दौड़ने लग जाते हैं। अगर वो नहीं मिलती है तो फिर उनको इतना दुःख होता है, दारुण दुःख होता है कि वो सोचते हैं कि मेरे जिन्दगी का सब कुछ खत्म हो चुका। फिर ऐसे मनुष्य का जो चित्त होता है वह हर चीज़ को जानता हुआ चलता है। इसके चित्त में ये शक्ति होती है कि जहाँ भी उसका चित्त पहुँच जाए, वह चित्त स्वयं ही कार्यान्वित हो जाता है।

अब चित्त जो है ब्रह्मदेव की देन है। लेकिन जब ब्रह्मदेव या ब्रह्मदेव का सिर्फ ब्रह्म ही रह जाता है तो ऐसा चित्त इतना प्रभावशाली होता है, इतना प्रेममय होता है, इतना सूझबूझ वाला होता है और इतना होशियार होता है कि वो अपने कार्य को बड़े ही सुगम तरीके से कर लेता है। मतलब ये कि ऐसे आदमी का चित्त परम चैतन्य से एकाकारिता प्राप्त कर लेता है और जब परम चैतन्य से एकाकारिता हो गयी तो परम चैतन्य तो सारे कार्य को करता ही रहता है। तो जितने भी कर्म है दुनिया के वो सिर्फ ये ब्रह्मशक्ति, ये परम चैतन्य करते हैं और ये जो कर्म मनुष्य कर रहा है वो उस वक्त ये नहीं सोचता कि मैं कर रहा हूँ। उसको इसकी अनुभूति ही नहीं होती। वो तो यही सोचता है कि हो रहा है। ये घटित हो रहा है। ये बन रहा है। अकर्म में जिसको कहते हैं उतरना क्योंकि परम चैतन्य ही सारे कार्य कर रहे हैं तो मैं एक माध्यम मात्र बीच में हूँ। आत्मा के प्रकाश से ही यह हो सकता है। नहीं तो कभी नहीं हो सकता है। अगर मनुष्य कहे कि मैं सारे कार्य करता हूँ, परमात्मा पर छोड़ देता हूँ पर छोड़ नहीं सकता, ये झूठ बात है। इस तरह कोई सोचता है तो अपने को दगा दे रहा है और झूठ पर खड़ा है। सच बात यह है कि परम चैतन्य ही सब कार्य को कर रहा है, बहुत सुगम तरीके से। इतना सुन्दर उनका कौशल्य है, इतनी युक्तियाँ हैं कि मनुष्य आश्चर्य में पड़ जाता है कि किस तरह वो कार्य करता है। और जब मनुष्य उस प्रकाण्ड श्रद्धा स्वरूप अपने एक विशाल हृदय में बहुत से लोग बताते हैं कि माँ इतना बड़ा चमत्कार हो गया, मैंने तो सिर्फ प्रार्थना की और कार्य हो गया, इतना बड़ा चमत्कार हो गया।

कर्म तो हम नहीं करते हैं। कर्म तो परम चैतन्य कर रहा है। सारे कर्म वही करते हैं, हम तो 'मिथ्या' सोचते हैं कि समझ लीजिए कि कुछ चाँदी मिल गई, जो मरी हुई चीज़ थी, उससे कुछ बना दिया तो सोचा कि हमने बड़ा कुछ बना दिया। हम तो मरे से मरा बनाते हैं। लेकिन सारा जीवन्त कार्य जो है परम चैतन्य करता है। और ये जो परम चैतन्य की हमें देन मिली हुई है और उसका जो हमें अनुभव हुआ है वो सारा आत्मसाक्षात्कार से है। क्योंकि परम चैतन्य जो है, वो आदिशक्ति है, जो कि शिव की इच्छा शक्ति है, उसी का प्रकाश है। इस परम चैतन्य के आशीर्वाद से ही आप लोग सारे कर्म करेंगे। जिस दिन ये आपमें घटित हो जाए, आप अद्भुत लोग हो सकते हैं।

लेकिन 'मैं यह कर रहा हूँ', यह जब भावना आई, और 'मैंने ये किया' और 'मैं ये करना चाहता हूँ', या कोई जोर जबरदस्ती किसी भी चीज़ की, तो इसका मतलब यह है कि आत्मा का प्रकाश पूरी तरह से आपके अन्दर अभी नहीं आया

है। सो पूरा कर्म ही ये परम चैतन्य कर रहा है तो आप अकर्म में आ गये, जब आप कोई कार्य ही नहीं कर रहे, जैसे कि ये बल्ब कहे कि 'मैं बिजली दे रहा हूँ' तो गलत बात है। आपके अन्दर वही परम चैतन्य कार्य कर रहा है, जो लोग आत्मसाक्षात्कारी हैं। जिसने आपको बनाया, आपको घड़ाया। आपका शरीर, सब चीज़ जो बनी है वो उसी परम चैतन्य की कृपा से बनी है। और उसके बाद आज जो मनुष्य बनके भी, आप जो आत्मसाक्षात्कारी बन गए, वो भी उस परम चैतन्य का ही आशीर्वाद है। तो ऐसे मनुष्य में अहंकार कैसे आ सकता है। जब वो जानता है कि मैं कुछ भी नहीं कर सकता हूँ। जैसे कि एक आर्टिस्ट है और उसके हाथ में कूँचली (ब्रश) है और वह कूँचली जानती है कि मैं कुछ कार्य नहीं करती हूँ, यह तो एक आर्टिस्ट है, जैसे कि मैं आपको कृष्ण की बात बताती हूँ कि कृष्ण की मुरली ने कहा कि, 'मुझे लोग क्यों कहते हैं कि मैं बजती हूँ पर बजाने वाला तो कृष्ण है। मैं तो खोखली हूँ।' सो वो खोखलापन जिसको अहंकाररहित कहते हैं, पूरी तरह जब हमारे अन्दर स्थापित हो जाता है तब हम सोच सकते हैं, कि हमारे अन्दर जो एक विचार था कि, 'हम ये कार्य करते हैं, वो कार्य करते हैं' कितना दुःखदायी था, कितना परेशान करने वाला। क्योंकि मैं यह कार्य कर रहा था और 'मैंने' ये कार्य किया और उस कार्य का कोई 'फल' ही नहीं निकला, इसलिए मैं दुःखी हो जाता हूँ। मैंने यह कार्य किया और इसमें मुझे बड़ा यश मिल गया तो और मेरा दिमाग खराब हो जाता है। किन्तु मैंने यह कार्य नहीं किया, करने वाला परम चैतन्य का सारा कौशल्य है, तो जो हुआ सो ठीक ही है। गर समझ लीजिए हमारा रास्ता कहीं खो गया, हम गलत रास्ते से आ गए। उस समय कोई यह सोच सकता है कि 'मैं गलत रास्ते से आ गया। बड़ी गलती हो गई। मुझे इस रास्ते से नहीं जाना चाहिए था।' लेकिन एक आत्मसाक्षात्कारी सोचता है कि यहाँ से जाना जरूरी होगा इसलिए मैं जा रहा हूँ। तो उसको दुःख नहीं होने वाला, तकलीफ नहीं होने वाली। वह ये नहीं सोचने वाला कि 'इस रास्ते से क्यों आया, इस रास्ते से न आता तो मेरा ठीक रहता, मैं गलत रास्ते में आ गया।' यह कुछ वह सोचता नहीं। सोचता है, ठीक है। उसके सामने आप हजार विनय कर दीजिए, 'भाई कैसे हैं,' 'ठीक हैं।' उसके सामने कोई चटनी या थोड़ा पापड़ रख दीजिए, 'भाई, कैसा था?' 'बढ़िया था' आप कहेंगे कि कैसा आदमी है ये, उसमें कोई स्वाद नहीं। उसको कुछ भी दो कहता है 'बहुत अच्छा है।' यह है किस तरह का आदमी! फिर आप उसे महलों में रखिए वो राजा जैसा बैठा रहेगा। और आप उसको जंगलों में रखिए तो जंगलों में रह लेगा, उसको आप पेड़ पर बैठा दीजिए, वह बैठा रहेगा। उसको कोई शिकायत होगी कैसे? जब कि वो जानता है कि परम चैतन्य ही मुझे इधर से उधर हटा रहा है। तो फिर शिकायत किससे करें। उसको आप मारिये तो कहेगा-ठीक है और अगर या हार पहनाओ तो कहेगा कि ठीक है, दोनों उनके लिए ठीक है क्योंकि **आत्मा जो है वो किसी चीज़ में चिपकता नहीं।** जब आप किसी चीज़ में चिपक जाते हैं जैसे कि 'मेरी प्रतिष्ठा, मैं बड़ा आदमी, मैं छोटा आदमी, मैं बड़ा प्रतिष्ठित हूँ या मैं ऐसा हूँ' तब आपको लगता है कि इन्होंने मेरे साथ ऐसा क्यों किया। लेकिन असल में जो आदमी बैठ गया, उसको यह महसूस ही नहीं होता, वो अपने आत्मा में ही संतुष्ट रहता है। वह कोई बक-बक नहीं करता। जब बोलना है तब बोलता है, नहीं बोलना है तब नहीं बोलता। किसी ने कुछ कह दिया उसे सुन लेता है, गर कुछ ज्ञान की बात है तो उसे सुन लेता है और अज्ञान की बात है तो उसे भी सुन लेता है। उसे पता होता है कि यह ज्ञान है और ये अज्ञान है। अगर समझ लीजिए आपने पूछ लिया कि 'इस जात के लोग कैसे हैं?' वह कहेगा 'ठीक हैं- इन लोगों में ये गुण है, यह-यह दोष है उनके।' गुण का वर्णन मात्र कर देगा, पर यह नहीं कहेगा कि मुझे इनसे नफरत है। यह कभी नहीं कहेगा। क्योंकि घृणा करना एक पाप है और इसलिए उससे कोई पाप ही नहीं हो सकता। जो भी वो करेगा वह पुण्य होगा।

समझ लीजिए उसे किसी को मार डालता है, अब देवी है, वो भूतों को मारती है। वो कोई पाप नहीं। वो नहीं मारे तो

पाप फैलेगा। तो वो अपने काम से चूकता नहीं। उसे जो करना है वो करता है। क्योंकि परम चैतन्य मार रहा है। मैं कौन मार रहा हूँ? परम चैतन्य गर चाहते हैं कि इसको मार डालूँ, तो बस मार डालता है, पर परम चैतन्य कहते हैं कि तुम कार्य करो तो मैं इसे करता हूँ। लेकिन परम चैतन्य की गुहाही देने से पहले उससे वह एककारिता तो स्थापित होनी चाहिए। परम चैतन्य आप ने कह दिया ठीक है, वो आपकी जेब में थोड़े ही बैठा हुआ है, अगर आप में यह स्थिति है और आप उस ऊँची दशा में पहुँच गये कि जहाँ पर आपको परम चैतन्य से एकाकरिता प्राप्त होती है तब आप जिस चीज़ को गलत समझते हैं उसके लिए आप कह सकते हैं।

बड़े-बड़े संतों ने इतने लोगों को बताया है कि तू इतना खराब है, तू इतना दुष्ट है, तू ऐसा क्यों करता है, यह है, वह है, सब उसको बता दिया ताकि उसके मुँह पर कोई डरे नहीं। क्योंकि वे जानते थे कि यह परम चैतन्य का कार्य है, उसमें उनको डरने का क्या! ज्यादा से ज्यादा जेल हो जाएगी। साक्रेटिस को (सत्य) बोलने के लिए जहर दिया गया, तो वो कोई डरा था! उसने कहा जहर या और कुछ पिला दो। उसको कोई भी प्रलोभन दो, कुछ भी करो, वो जिसे सत्य समझता है वो ही बोलेगा। क्योंकि परम चैतन्य सत्य ही बुलवायेगा। जिस वक्त उसे जिसने सत्य बोलना है उससे वो सत्य ही बोलेगा और वो सत्यनिष्ठ होगा। उसकी बुद्धि हर सत्य को एकदम पहचान जाएगी कि कौन सच्चा है, कौन झूठा है, एकदम समझ जाएगी ऐसी उसकी बुद्धि कुशाग्र होगी उसकी बुद्धि को हम सुबुद्धि कह सकते हैं। क्योंकि उस बुद्धि पर आत्मा का प्रकाश आ गया। एक नज़र से वो पहचान सकता है कि कौन कितने गहरे पानी में हैं और फिर उसको परम चैतन्य ही बता देता है कि इस आदमी को कैसे ठिकाने करना है। बहुत से लोग बहुत बार मुझे कहते हैं कि आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था, आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था जब, वे उसका परिणाम देखते हैं तो कहते हैं कि अच्छा हुआ आपने ऐसा कहा। नहीं कहा होता तो ये होता ही नहीं।

सो परम चैतन्य का करना धरना और उसका ही सब कुछ पाना है और उसका भोग भी हम नहीं उठा सकते। उसका भोग भी परमात्मा ही उठाते हैं। हम तो सिर्फ उनकी लीला ही देखते रहते हैं और अगर हम किसी चीज़ का भोग उठा ही सकते हैं तो उस आत्मा के लीला का ही भोग उठा सकते हैं। अब अध्यात्म जो है वो इस आत्मा के प्रकाश का, उसके कार्य का, उसके लीला का, सबका एक तरह से विज्ञान है, उसका साइन्स है। अगर जो सच्ची तरह से इस चीज़ को समझ ले, वो समझ सकता है कि सारे सृष्टि का विज्ञान ही आत्मा से आता है और जब तक ये विज्ञान हमारे अन्दर नहीं आएगा तो बाह्य का विज्ञान बिल्कुल ही बेकार है क्योंकि उसमें बहुत ही थोड़ी सी चीज़ है विज्ञान की कि वो जड़ वस्तुओं के बारे में आपको समझा देता है। उसमें सन्तुलन नहीं है, उसमें सामाजिकता नहीं है, उसमें मनुष्यता नहीं है, और उसमें प्रेम नहीं है, उसमें कला नहीं है, उसमें कविता नहीं है, उसमें आदर नहीं है, कुछ भी जो कि मनुष्य वो चीज़ ही नहीं है। एक मशीन जैसी चीज़ है। विज्ञान को समझने के लिए भी मनुष्य को आत्मा का प्रकाश चाहिए। आत्मा के प्रकाश से आप विज्ञान के बहुत से छोर खोल सकते हैं, जो अभी तक नहीं खुले और फिर विज्ञान में जाकर उसका पता लगाये तो समझ सकते हैं। ये और पूछते हैं कि माँ आप कैसे जानते हैं। हम तो नहीं जानते हैं। लेकिन सब जाना ही हुआ है। जिसने सब कुछ जाना हुआ है उसको जरूरी नहीं कि वो सब कुछ सबको बताये। क्योंकि सबको समझना भी तो आना चाहिए उसको। जरूरी नहीं सबको उपदेश देता फिरे, जो जहाँ है वही रहने दीजिए। जिस वक्त मौका आएगा तब उसे समझाना चाहिए। इस सहजयोग में भी बहुत से लोग बड़े कभी-कभी परेशान हो जाते हैं। मेरा बाप है, सहजयोग में नहीं है, मेरी माँ है, वो सहजयोग में नहीं है, मेरा भाई है वो सहजयोग में नहीं है। नहीं है तो जाने दीजिए। आप तो है न। आप अपने साथ रहिए। जितना मनुष्य अपने साथ आनन्द में रहता है उतना किसी के साथ नहीं रहता, क्योंकि सारा कुछ आप ही के अन्दर है। इसलिए ये नहीं है उसमें,



वो नहीं है उसमें, इस तरह की बातें सोचना, फिर यही विचार आता है कि अभी पूरे दालान हमारे हृदय के खुले नहीं। इसलिए हम ऐसा सोचते हैं। जो अब आत्मसाक्षात्कारी है यही आपके बाप, भाई, बहन हैं, और इनको तो कोई वो प्रश्न नहीं है। यह प्रश्न उन लोगों को होता है जो अभी भी आधे अन्धकार, आधे प्रकाश में हैं। वो ये सोचते रहते हैं कि, अभी ये मेरा भाई उसमें फंसा हुआ है, मेरी बहन उसमें फंसी हुई है। अपने आप से वो आ जाएंगे किसी से जबरदस्ती नहीं हो सकती। इसी तरह का एक आत्मसाक्षात्कारी सोचता है। वो देखते रहता है, सबको देखते रहता है और आनन्द उठाता है। मनुष्य के पागलपन में भी वो आनन्द उठा लेता है और उसके स्यानेपन में भी वो आनन्द उठा लेता है। कोई अगर बेवकूफी की बात करता है, तो उसका आनन्द भी उठा लेता है। और कोई समझदारी की बात करता है तो उसका भी आनन्द उठा लेता है। सब चीज़ में उसे एक आनन्द का स्रोत दिखाई देता है। कोई मनुष्य अगर विक्षिप्तता से रहता है, तो उसमें भी उसे लगता है कि, देखो, यह कैसा एक नाटक है, जैसे किसी नाटक के बारे में कोई नाटककार लिखता है कि एक विक्षिप्त को दिखा दिया या गुस्सैल आदमी दिखा दिया, बड़ा क्रोधी और उसका मज़ाक बन रहा है। तो जब एक आत्मसाक्षात्कारी, क्रोधी मनुष्य को देखता है तो फौरन उसे क्या लगता है, कि वाह भई वाह क्या क्रोध चढ़ रहा है इस पर। अब तो और भी चढ़ गया। अब तो सिर्फ आज़ा चक्र में था और अब तो सहस्रार में भी चढ़ गया। अब न जाने क्या-क्या होने वाला है। वह तो यही सब सोचते रहता है। उसको कोई घबराहट नहीं होती। पर वह तो यह सोचता है कि इसके क्रोध का जो चला है कहीं ऐसा न हो जाए कि उसका सर फट जाए या कुछ तो फिर कहेगा कि थोड़ा सा ठण्डा होकर ही सोचें। वह कहेगा नहीं रहने दीजिए। मैं समझता हूँ इसे। तो ठीक है, समझिये। मैं भी आपको समझ रहा हूँ। तो वो बैठे-बैठे उसके बाद अगर उससे कहिए कि आप नाटक लीखिए। तो वो इतना सुन्दर नाटक लिख लेगा खुद ही आदमी का कि आप हँस-हँस के लोट-पोट हो जाएंगे।

उसमें जो यह दृष्टि है इसकी, ये किसी में उलझी हुई दृष्टि नहीं है। इसे निरंजन दृष्टि कहें या साक्षी-स्वरूप। साक्षी-स्वरूप दृष्टि में वो सारे समाज का इतना सुन्दर चित्रण कर देता है कि सिवाय हँसी के आपको कुछ भी समझ में नहीं आता कि वाह भाई, क्या ये चित्रण बनाया है। यानी गम्भीर से गम्भीर में भी आप ये समझ सकते हैं कि बहुत सी बातें ऐसी हैं जो कि दिखने को गम्भीर लगती हैं लेकिन उसमें एक तरह का बड़ा छिपा हुआ सन्देश है। हर चीज़ में। यों तो हुआ कि जब युद्ध देखते हैं तो बड़ी उद्विग्नता आ जाती है। लगता है ये क्या हुआ, क्यों मार रहे हैं बिचारे सीधे-साधे लोगों को क्यों मार रहे हैं। अगर ये जो उद्विग्नता आ जाए हमारे साक्षात्कारियों को तो फौरन उसकी खबर चली जाएगी परम चैतन्य को, और जो आततायी ये काम करेगा उसका ठिकाना हो जाएगा, उसका इलाज हो जाएगा। वो उद्विग्नता भी एक तरह से कार्यान्वित होती है। कोई आह्लाददायी चीज़ है तो वह ठीक ही है। लेकिन कोई ऐसी भी चीज़ हों, जिसको देखकर उद्विग्नता आयें, पर मनुष्य सोचे कि ऐसे कार्य क्यों हो रहे हैं। ऐसे नहीं होने चाहिए, तो फौरन उसका इलाज हो जाएगा। बहुत सी बातें इस तरह होती रहती हैं। जैसे कि मैं अपने बारे में बता सकती हूँ कि जब मैं रशिया (रूस) में पहली बार गई तो रशिया में ७-८ दिन रहने के बाद फिर घर जाने पर फिर से बात निकली कि फिर से वहाँ योग का एक सेमिनार होने वाला है। तो हमारे घर में ये कहा गया कि अभी-अभी जा कर आए हो, फिर आप दो दिन के लिए जाओगे! क्या फायदा है। जाने दीजिए, लोग हैं सम्भाल लेंगे। तो मैंने कहा, 'नहीं मुझे वहाँ जाना जरूरी है।' तो कहने लगे 'क्यों?' मैंने कहा कि 'जो इस्टर्न ब्लाक है उसे तोड़ना है।' वह कहने लगे 'कैसे टूटेगा?' तो मैंने कहा, 'बस टूटेगा।' क्योंकि वहाँ इस्टर्न ब्लाक के सब लोग वहाँ आएंगे, और उन में से जो लोग पार हो जाएंगे वो जाते ही वहाँ परम चैतन्य अपना काम कर लेगा चाहे एक-एक ही आदमी हो। आश्चर्य की बात यह है कि उस योग सेमिनार में मैं सिर्फ पैतालीस मिनट ही बोली और पन्द्रह मिनट में आत्मसाक्षात्कार दिया और उसके बाद वो जितने भी लोग ये अपने-अपने देश में गए और वहाँ ये कार्य हो गया।

सो परम चैतन्य के कार्य के लिए अब जरूरी है कि आत्मसाक्षात्कारी लोग हों, या उनका साधन हो। परम चैतन्य का कार्य आत्मसाक्षात्कारी लोगों के ही इच्छा के अनुसार होता है। अगर आपकी इच्छा हो तो वो कार्य हो सकता है। पर आपकी इच्छा में भी शुद्धता होनी चाहिए। ऐसी इच्छा नहीं जिसमें आप स्वार्थी हों, या ऐसी इच्छा नहीं जिसमें आप अपने ही बारे में सोचते हैं, क्योंकि ये कार्य आत्मा के ही बल पर होता है और आत्मा जो अपना शिव है जैसा मैंने बताया वो बिल्कुल स्वच्छन्द, निस्पृह, निराकार, निरन्तर और नित्य इस तरह की प्रकृति का है। इसलिए जो मनुष्य आत्मसाक्षात्कारी हो जाता है, उसमें ये सारे ही गुण आ जाएंगे। ये गुण अगर आपके अन्दर नहीं आए जैसे आपसे मैंने कहा कि, बाह्य से आप में सारे आवरण हों, आप राजा हो, आप चाहे कुछ भी हो, अन्दर से आप निस्पृह हैं, अन्दर से आप छूटे हुए हैं, आप किसी चीज़ से चिपकते नहीं, अन्दर से आप किसी से द्वेष नहीं करते, किसी का भक्षण नहीं करते, किसी के लिए आपको लालसा नहीं होती; ये सारे षडरिपु अपने आप छूट जाते हैं।

तो आत्मा का सबसे बड़ा प्रकाश यही है कि आपको कोई प्रयत्न नहीं करना है। वे कहते हैं, 'मन को वश में रखो' पर किसी को वश में रखने की जरूरत नहीं। जैसे ही आप आत्मसाक्षात्कार में उतरते जाते हैं, उस प्रकाश में अपने आप अन्धता दूर होती जाती है और ये बड़ा भारी लाभ है, जिसने इस लाभ को अभी तक प्राप्त नहीं किया, उसे ये सोचना चाहिए कि अभी हमारा आत्मसाक्षात्कार पूरी तरह से फलित नहीं हुआ। अगर हमारा आत्मसाक्षात्कार पूरी तरह से फलित हुआ है तो हमारे जीवन में, हमारे आस-पास के समाज में, हमारे सहजयोग के समाज में, हर जगह, एक नवीन तरह का मनुष्य तैयार होना चाहिए, जो आत्मा स्वरूप है, जो आत्मा के प्रकाश से प्लावित है। जिसमें शिव का दर्शन होता है। अब शिवजी को देखा है आपने, कि जब उनका विवाह हुआ तो उनकी जो पत्नी थी, वो तो बहन थी विष्णुजी की और विष्णु जो थे वे कुबेर थे, उनकी बहन से शादी हो रही थी और ये अपने नन्दी पर बैठ करके, उसमें न लगाम था न कुछ दोनों पैर लगा कर नन्दी पर बैठ गये और नन्दी कूदता हुआ चला आ रहा था और वे नंग-घड़ंग उस पर बैठे हुए हैं। यह सब अभिव्यक्ति है कि उनको किसी चीज़ की लगन नहीं थी, उनको किसी चीज़ का ये विचार नहीं कि मुझे ये चाहिए, नहीं तो कोई सोचेगा कि भाई, मैं कुबेर की बहन से शादी कर रहा हूँ, कौन से कपड़े पहनूँ? कौनसे रथ से जाऊँ? दस दिन पहले इनके कपड़े बनेंगे, उसके जूते बनेंगे, उसका सारा अवतार बनेगा, तब वह पहुँचेगा। पर शिवजी ने सोचा कि मेरा तो विवाह हो रहा है, इससे ज्यादा कोई बात मुझे मालुम नहीं। उन्होंने कोई विचार नहीं किया। और उनके साथी जो थे, वह भी उन्ही जैसे, किसी के एकाक्ष थे, किसी के हाथ पैर गले हुए, सबको एक साथ लेकर, कोई बात नहीं। इसका प्रतीक रूप से ये अर्थ होता है कि आपके पास शारीरिक कोई भी व्यंग हो, या कोई भी चीज़ हो जब तक आत्मा का प्रकाश आपके अन्दर है कोई सी भी आपकी शक्ल हो, कोई सा भी आपका रूप हो, तो शिव आपको मानते हैं और शिव अपनी बरात में आपको ले जाएंगे। वहाँ सब लोग हैरान हैं कि ये दूल्हा मियाँ कैसे चले आ रहे हैं, नन्दी पर बैठ कर के, दोनों तरफ दोनों पैर करके, पर ये तो स्वच्छन्द है, इनको कोई परवाह नहीं। निस्पृह है। बाते हुई होगी वहाँ पर कि ये कैसा दूल्हा चला आ रहा। तो पार्वती जी को अच्छा नहीं लगा क्योंकि वे जानती थी कि मेरा पति जो है, वो आत्मस्वरूप है। इसलिए उन्हें निःसंग कहते हैं।

इसमें हमारे दो अंग दिखाई देते हैं। एक तो हमारा अंग कि जो आज हम विष्णु स्वरूप हैं जो बाह्य में है और अन्दर का अंग जो है वो हमारे शिव है और उस शिव के जैसे हमें निस्पृह, स्वच्छंद और निरासक्त होना चाहिए। किसी चीज़ की आसक्ति हमारे अन्दर नहीं आ सकती, अगर हम आत्मा स्वरूप हैं। फिर बाह्य में आप श्रीकृष्ण हो जाएं या आप और कोई हो जाएं लेकिन अन्दर का जो शिव है वो अपनी जगह स्थिर रहेगा। बाह्य का अंग जो है वो महत्वपूर्ण अब नहीं रहा जब



कि आप आत्मा स्वरूप हो गए। और जब आत्मा स्वरूप हो गये तो इन सब चीजों के लिए आपकी जो भावनाएं हैं, वो एक दम बदल जाएंगी। श्री एकनाथ जी का सुन्दर उदाहरण है कि वह कावड़ ले कर पहुँचे थे द्वारिका, वहाँ चढ़ाने और ऊपर चढ़के उनको जाने का था। ये अब भक्ति का माहौल उनका था। सब लोग गये कावड़ में पानी भर कर। लेकिन उस वक्त उन्होंने देखा कि एक गधा प्यास से मरा जा रहा था। उन्होंने उसको पानी पिला दिया। लोगों ने कहा क्या करते हो? वहाँ से आप कावड़ भरके आप इतनी दूर पैदल चल के, पानी भर के आए और इस गधे को पानी पिला दिया। तो उन्होंने कहा कि 'तुमको नहीं मालुम, मेरा श्रीकृष्ण यहाँ तक उतर के आया पानी पीने।'।

ये जो भक्ति का सूक्ष्म भाव है, वो एक आत्मसाक्षात्कारी ही समझ सकता है, कि बाह्य को देखना कि हम कावड़ ले कर गए और 'हमने' जाकर के उनको समर्पित किया। हम कौन होते हैं? जब वही भाव हट गया, 'हम' ही भाव नहीं रहा और वहाँ पर एक बिचारा प्यासा प्राणी पड़ा हुआ था उसको आपने पानी पिला दिया, ठीक है परम चैतन्य ने ये कार्य कर दिया। हमसे क्या मतलब। इसलिए बहुत सी बातें जो संतों की हम समझ नहीं पाते हैं, वो अब समझ पाइयेगा क्योंकि अब आपने आत्मसाक्षात्कार पाया है और आपसे भी ऐसे कार्य हो जाएंगे और जो नासमझी हमारे अन्दर रही संतों के कारण कि उनका जीवन विक्षिप्त जो हमें लगता था, क्योंकि हम स्वयं विक्षिप्त हैं। जब पागलखाने में जाइये तो अच्छा भला आदमी भी पागल लगने लग जाता है। उसी तरह इस पागल दुनिया में वो आये और ये समझाने की कोशिश की, पर किसी ने समझा नहीं उन्हें और उनको तकलीफ दी और परेशान कर दिया क्योंकि वे आत्मस्वरूप थे, वे शिव में स्थित थे, वो शिव स्वरूप थे। शिव स्वरूप आदमी बाह्य में कैसा भी रहे, उसकी शिव स्थिति बाह्य में भी प्रकाशित रहती है, निखरती रहती है। सबसे बड़ी चीज़ है औदार्य (उदारता)। औदार्य चीज़ जो है, वह शिव शक्ति है। इतना उदार हृदय वो है कि उन्होंने राक्षसों को तक वरदान दिया। क्यों? 'क्योंकि देता हूँ मैं वरदान।' अब मेरे पास भी कुछ लोग आते हैं कि माँ हमें वरदान दो। मैं जानती हूँ ये लोग बड़े खराब हैं। 'चलो तुमको वरदान चाहिए, लो।' परम चैतन्य देख लेगा इनको, मुझे क्या करने का है। राक्षसों को भी वरदान दिया। चलो, तुम्हे चाहिए, लो। क्या चाहिए ले जाओ। एकदम औदार्य। इसको कहना चाहिए कि एक अन्धा औदार्य, आप कह सकते हैं। यह अन्धा नहीं है क्योंकि पूर्ण विश्वास है कि परम चैतन्य वहाँ बैठा हुआ है, मेरी शक्ति है, मेरे सारे कार्य को कर रही है। मैं तो यों ही कहने के लिए, 'ले जाओ।' यहाँ से ले जाते ही रास्ते में विष्णूजी ने उसका हाल खराब कर दिया। जो सब चीज़ को जानते हैं, उनके लिए यह प्रश्न नहीं रहता कि इनका क्या होगा, क्या नहीं होगा। वह सब जानते हैं। उसी प्रकार जो शिव में स्थित है, वह अपने में बड़ा समादानी होता है और वह सब कुछ जानता है, सब कुछ समझता है, पर वह कहेगा नहीं। लेकिन वह सब कुछ जानता है। और सबसे बड़ी शिव की शक्ति है प्रेम, निर्वाज्य प्रेम-जिसमें कि कोई ब्याज नहीं देना, ब्याज तक नहीं देना है, निर्वाज्य। उनकी करुणा की शक्ति इतनी जबरदस्त है कि उस करुणा को देखकर के आप भी अचम्भे में पड़ जाएंगे।

मुझे बहुत लोग कहते हैं कि, माँ तुमने इस आदमी की क्यों मदद करी, यह तो बहुत खराब आदमी है। उसने ये किया, वो किया। भाई अब क्या करें, वो आया, ठीक है, हो गया। चलो जाने दो। जो हो गया, हो गया, चलो जाने दो। कर दिया, इसमें क्या करना। अब वह करुणा ही है, क्या किया जाए। कोई रोक सकता है? जब सारा शरीर ही करुणा से भर जाए तो कोई भी मनुष्य पास में आ जाए तो वह करुणा का कार्य करेगा ही। ये शरीर छोड़ेगा ही नहीं। उसे क्या करें! इसी तरह एक आत्मसाक्षात्कारी मनुष्य का करुणा का भाव बढ़ता है और उसकी जो नशा चढ़ती है वो ऐसी नशा है कि अकेले मजा नहीं आता। आप आत्मसाक्षात्कारी हो गये तो चुप नहीं बैठने वाले कुछ भी करो। कहेंगे कि चलो, मैं हो गया, दस आदमी और इसे पिये तो मजा आएगा। देखेंगे, चलो भाई, उसको भी करो, इधर से उधर दौड़ेगा। जाएगा सबसे

कहेगा, देखो, आत्मसाक्षात्कार कितनी महत्वपूर्ण चीज़ है। इसमें उसको तकलीफें होंगी ही। लोग उसे सतायेंगे, बुरा कहेंगे। उस पर कोई असर नहीं आने वाला है क्योंकि वह परम चैतन्य का एक, जैसा मैंने कहा, कलाकार के हाथ में कूंचली (ब्रश) है, वैसे कूंचली है। उसको इसकी परवाह नहीं। वह तो कलाकार जाने, मुझे क्या? मैं तो बीच में बैठा हुआ देख रहा हूँ कि कोई चित्र बना रहा है। उसी प्रकार उसकी प्रवृत्ति ही इतनी अनासक्त होती है कि वो अत्यन्त शक्तिशाली हो जाता है। उसका भय, या आशंकाएं सब खत्म हो जाती है और बहुत ही सुन्दर कार्य को बड़े खूबी से कर लेता है। और लोग आश्चर्य करते हैं कि यह कैसे कर लिया। कोई चीज़ समझाता भी इतनी सुन्दरता से है कि मनुष्य का अगर अहंकार है तो उससे जा के नहीं कहेगा कि तू बड़ा अहंकारी है, कभी नहीं कहेगा। ये कभी आत्मसाक्षात्कारी नहीं कहेगा। यह नहीं, जैसे कुछ सहजयोगी कहते हैं कि तुम्हें भूत लग गया, ऐसा कभी नहीं कहना चाहिए। उसका तरीका भी, एक श्री रामदास स्वामी का बताती हूँ आपको।

एक बार शिवाजी को थोड़ा अहंकार हो गया क्योंकि किला बन रहा था। उसमें हजारों लोग काम कर रहे थे। उनको थोड़ा अहंकार हो गया कि देखो, मैं कितने लोगों को पालपोस रहा हूँ। तब रामदास स्वामी वहाँ पहुँचे, वो तो हर जगह पहुँच जाते थे। उन्होंने देखा कि इनको अहंकार हो गया है। कुछ कहा नहीं उन्होंने। वहाँ एक बड़ा सा पत्थर पड़ा था। कहने लगे जरा इसे धीरे-धीरे तोड़ दो। पत्थर को तोड़ते-तोड़ते एक छोटे से नारियल के जैसे पत्थर पर आ पहुँचे। तो उस पत्थर को हाथ में लिया और एक हाथ से खटाक से मारा तो देखा क्या कि उसके अन्दर में पानी है और पानी के अन्दर में ढक बैठा है। शिवाजी ने एकदम उनके चरण पकड़ लिए कि जिसने आपको जीव दिया है वह पानी भी देता है, मैं कौन होता हूँ देने वाला। यह अहंकार किस तरह से तोड़ा जाए। आपको आश्चर्य होगा कि साइन्स भी कहता है कि मेंढक जो है वो बगैर हवा के, अगर उसके पास पानी हो, तो रह सकता है।

तो आपको अगर किसी का अहंकार भी तोड़ना है तो उससे कहने की जरूरत नहीं कि तु बड़ा अहंकारी है। आप सिर्फ सोच ही लीजिए कि वो अहंकारी है तो, परम चैतन्य उसकी व्यवस्था कर देगा और उसका अहंकार टूट ही जाएगा। पर सबसे पहले एक आत्मसाक्ष मनुष्य को यही सोचना चाहिए कि मैं अब शिव में शरणागत हूँ, मेरी आत्मा में मैं शरणागत हूँ और मेरी आत्मा के ही कारण ये परम चैतन्य सारा कार्य करने वाला है और इसलिए मुझे कोई किसी चीज़ की चिन्ता नहीं। मेरा कौन बैरी है! कौन मुझे मार सकता है? मैं तो परम में जी रहा हूँ। सारा कार्य जब यही कर रहा है, तो मैं कौनसा कार्य कर रहा हूँ? इस तरह की जब भावना हो जाए तब कहना चाहिए कि हमारे अन्दर के शिव को हमने पहचाना है। हम बाह्य के अपने शरीर वगैरह सबको खूब समझते हैं प्रतिष्ठा को समझते हैं, पर इस शिव को पहचानना चाहिए जो हमारे अन्दर है, जो हमारे अन्तरतम में है। जो हमारी ही सारी शक्ति का आधार, जिसे कि हम सच्चिदानंद कहते हैं, उस शिव को ही हमें मानना चाहिए।

आप सबको अनन्त आशीर्वाद!

# ENGLISH TRANSLATION

## (Hindi Talk)

Scanned from English Divine Cool Breeze

Today is Shivratri and today is the day we pray to Lord Shiva. On the outside, we can gain mastery on our body, its movements, the mind, ego and various functions. Whatever is there in the universe, we can know it and use it like whatever elements there are in the earth, and what grows, we can use them. We can gain complete supremacy over all this. But this is all an outside manifestation. What we are within is the **spirit**. We are Shiva. What is on the outside is destructible. What is born will die. What is created will be destroyed. But what is within, is our Atma, who is our Shiva, who is a reflection of Sadashiva, is indestructible, desireless and free. It is not stuck to anything. It is stainless. By obtaining that Shiva, and getting the **Light of that Shiva**, we also slowly get renounced. The outside remains as it is, but within, is the atma - permanent and indestructible, always emitting its Light.

After self realization our life becomes Divine, auspicious and sacred. That is extremely important for human beings to attain. Without that we cannot lead a balanced life and be truly collective. Now can we have real love. Also we cannot know the truth. The pure knowledge can be known only in the light of the spirit. When one becomes enlightened by the spirit, then his attention also becomes pure. He does not get involved in anything. Just by his attention, he gets the whole knowledge of that thing. But when a person is not self-realized fully, then he always thinks about himself. He thinks what he will eat today, when will he get good food, what kind of food should he cook. Or he thinks where should I go today? Where will my importance be felt more, when will people give me respect. In what gathering will I gain prominence. The other style of person will think about how to make more money, gain the entire wealth of the world and put the world right. Another kind of person thinks, only about his children, grandchildren, relatives etc. These kind of thoughts which are self-centred like what is my position. What great advantage I will get out of this, what clothes should I wear. How should I impress people so they think how clever I am, how great I am? Another person is one who considers himself very humble and keeps bowing before everyone to show how he respects everyone? How cultured I am? The third person says, I am so learned and will have a discussion with intellectuals and read many books to show off his knowledge. And another thinks like this about his music or art. How best to impress others is what man thinks about mostly. People do lots of social work also, or sacrifice for their country. My country should be happy and prosperous. Some think that my art should spread all over the world so that my country gets a name. In this way man becomes happy seeing himself mixing in the collective. But in all this, there is the desire for victory, recognition and praise. He is always looking for something and that is why he gets stuck in the cycle of joy and sorrow. His attention remains stuck to this sense of "I".

But when he is one with his spirit, then he thinks differently - like he will think how to use this thing so that humanity is benefitted. People are suffering so much. What can be done to help them. His whole thinking shifts from self-interest. When he sees a tree, he thinks how beautifully God made it. "If only I would be like this and give shade to others. But I am not like this and I must become like this tree." If he sees the Himalayas then he will start singing praises of the Himalayas. But the one who does not know his spirit will keep singing his own praises. "That I went to Himalayas. I did this and that, make my grave on the Himalayas. Put the flag of my country there."

So there are two levels of human beings. The first who are realized souls and by the Light of the Spirit, they see everything. They never think that by doing this or that, they will get a great name, or people will praise them. They may even be killed, tortured or criticized but they will never be deterred. Like Jesus Christ who was crucified. But while being crucified, he prayed that "O God, forgive them for they do not know what they do."

A realized soul is beyond any temptations and pulls - that this should happen, this should get made. He does not desire. If it gets done, it's fine. If it does not get done, it's alright. He does not seek praise or fame. So he does not



get stuck into the cycle of joy and sorrow. They are alike for him. He can witness both sorrow and joy, as he understands that it is like day and night. He is himself drowned in the joy of the Spirit. He does not have to control his mind, for his mind and senses are fully in control. There are such people who run after something or the other as if their whole life depends on it. When they attain it, then they start moving after something else. Supposing they cannot get it, then they feel so upset, that they think their entire life is finished. But a realized Soul's attention is such that he moves through life knowing everything. There is so much power in his attention (Chitta) that wherever his attention goes, it starts working.

'Chitta' or attention is the gift of Shri Brahma Dev. When only the Brahma remains of Brahma Dev, then this attention becomes so powerful, so loving, so knowledgeable and so clever that it does its work in a very easy way. Which means that such a person's attention becomes one with the Param Chaitanya or Divine vibrations. When this happens then the Param Chaitanya does all. So all the work of this world is done by the Brahma Shakti and Param Chaitanya. When such a person does anything he does not think that he is doing it. He does not ever feel the need to think like this. He just thinks that it is happening. It is being made. It means to become Non-doer, because Param Chaitanya does everything. So he is just a medium through which Param Chaitanya works. It is happening through the light of the Spirit. Otherwise a person who thinks he does everything but says, leave it to God, is unable to leave it to God in reality. The truth is that Param Chaitanya does everything, very simply and easily. So beautiful is its skill and commands that man is left wonderstruck as to how it happened. We do not do anything. All deeds are performed by vibrations. We can only take some dead thing and make dead things from it - like from silver we make jewellery and then think what a great thing we have done. But all the living work is done by the Param Chaitanya and the experience of the Param Chaitanya is possible only through self-realization. Because Param Chaitanya is the Adi Shakti who is the Power of the Desire of Shri Shiva. It is His light. By the grace of this, Param Chaitanya only will you do everything and when this happens within you, you become unique people.

Whenever the idea comes "I" am doing this, "I" have done this, "I" want to do this or any kind of aggressive behaviour, then know that uptill now, you have not got the light of the Spirit within you. When you come into the freedom from action and you do not do anything, like if this bulb says that I am giving electricity, so it is wrong. Within you who are realized souls, it is the Param Chaitanya that is doing everything, which has made you, every part of your body, and made you grow. And now after becoming human beings, you have become realized souls, that is also the blessings of Param Chaitanya. So how can such a person be egoistical when he knows that "I do nothing".

The flute of Shri Krishna said that why do people say, I am playing. For I am hollow. This hollowness means egolessness and when this gets established within us fully then we think that what I thought that 'I am doing this or that' is so painful and so troublesome. Because I thought I was doing this work and it failed to materialize. So now I am so unhappy and "I" did this and got such a great name that it went to my head. But a realized Soul knows "I



have done nothing. It is the skill of the Param Chaitanya, so whatever happened is alright. Supposing we lose our way, one person will think that I have gone to a wrong way and now I made a mistake. But a Realized Soul thinks that perhaps I had to come this way, so he does not feel unhappy. You keep him in a palace and he can live like a king. You keep him in the forests and he will live there. How can he complain when he knows that Param Chaitanya places him in these various situations.

You can hit or garland such a person, it is the same for him, because the Spirit does not get attached to anything. He can be in any kind of crowd or meeting, he will never be effected as he is satisfied in his Spirit. If he needs to talk, he talks, otherwise he does not. If someone said something, he listens, whether it is words of knowledge and wisdom or folly. Others may talk about the good or bad qualities of people, but he will never say "I hate so and so". Because to hate is a sin. Whatever he will do will be auspicious. For example, the Devi kills the Bhoots. It is not a sin. If she does not kill them, sin will spread. So he does not back out of doing his duty, because it is the Param Chaitanya that is killing and not him.

However, before talking about Param Chaitanya, he should at least be one with the Param Chaitanya. When you achieve oneness with the Param Chaitanya, then whatever you consider wrong, you can speak against it. Great sages and saints were forthright and spoke openly about the untruth. Socrates was poisoned for speaking the Truth, because Param Chaitanya will make him speak the Truth. He will firmly adhere to Truth. His intelligence will be able to recognize Truth and Untruth, because the light of the spirit has come on to his brain and enlightened it. With a single glance he can know who is at what level. Param Chaitanya informs him of everything as the Param Chaitanya does everything. We are not concerned with results. Its results only God enjoys.

We can only watch this play. The only thing we can enjoy is the play of the Spirit.. It's working, it's play is a science of the Light of the Spirit. The one who can understand this, that the entire science of this universe comes from the Spirit. That till the knowledge of this science does not come within us, the outside Science is absolutely useless, because there is very little of science that can explain about the material things outside. There is no comparison in this outside science. No collectivity, no humanity, no love, no art, no poem no respect. There is nothing alive in it. It becomes like a machine. To understand science also, man needs the Light of the Spirit. By this Light of the Spirit, you can open many shores of Science, which uptill now have not been revealed. But in a way everything is known. And it is not necessary that the one who knows all, may reveal it to all. Because everyone must know how to understand it also. When the time comes, then only one should reveal. Even in Sahaja Yoga, many people get upset. My father is not in Sahaja Yoga, my mother, sister, brother etc. are not in Sahaja Yoga. Let it be. At least you are in Sahaja Yoga. You remain joyful with yourself. Because as much as a person remains joyful with himself, he cannot remain with anyone else, because everything is within you. To think he is not in it, he is not in that, to think like this means that doors of your heart are still not fully open. This question arises



only with those people who are still half in darkness and half in light. They keep thinking about their families. Leave them alone. They will come into Sahaja Yoga by themselves. You cannot force anyone.

A Realized Soul does not think like this. He keeps watching everything and enjoys it. He even enjoys the madness of human beings and also enjoys their wisdom. If someone speaks foolishly, he also watches and enjoys that and if someone speaks sensibly, he also enjoys that. In everything he sees only joy. If someone lives in a strange manner, then he says what a drama this is. When a Realised Soul sees an angry person, he thinks "O what anger" see how it has climbed. Now it's about the agya, he does not worry. His sight is not an entangled vision but an unstained and pure sight, or a witness state. In such a state, he can explain society in a humorous way. When the compassion and anxiousness will come within us, then through Realized Souls, the Param Chaitanya will immediately know, and then those who are spreading terrorism, will be finished. That compassion and anxiousness also in a way starts getting manifested. It's alright if something is joy giving, but something which creates a grieved state where a person thinks why such terrible things happen, and immediately its solution will start working.

When I went to Russia, there was to be a Yoga Seminar. So in my home it was said that why do you want to go there only for two days? I said, I have to go there because I have to break the Eastern Block. People of the Eastern Block will come to that conference and when these people get realisation and go back to their countries, then the Param chaitanya will start doing its work there. I spoke only for forty five minutes there and in fifteen minutes gave realization and then these people went to their countries, the work got done there. So far the work of Param Chaitanya, it is very necessary that the people should be self-realized. Because the work of Param Chaitanya gets done through the desire of self-realized people. The desire should be pure and not selfish, because this work gets done on the strength of the Atma.

The Atma is our Shiva, who is absolutely free, perpetual, constant and eternal. These qualities will come into a person after self-realization. If these qualities are in you, you may be a king, or anything but from within you are free and detached. From within, you do not curse anyone, nor do you crave for anything. The greatest Light of Spirit is that you do not have to try for anything, you do not have to control anybody. As you keep going deeper in the self-realized state, the darkness keeps getting eliminated in that light. This is the real gain. The one who has not gained this should know that as yet his self-realized state has not fully matured. If it has matured, then we should realize that in our lives, in the society around us, in our Sahaj Yoga community, a new type of person should be ready, who is a form of the spirit, one who is overflowing with the Light of Spirit, in whom one can see Shiva. When Shiva got married, he went to his wedding in just the way he was. This means that when you have the Light of the Spirit within you, then you could be of any face, any body, any type, but when you have that light, then Shiva will recognise you.

He has two forms, on the outside is the Vishnu form and within is Shiva form. We have to be like Shiva, free, independent and detached. Then outwardly,

you may be Shiva, Krishna or anyone, but the Shiva within you shall remain steady and established. When you have become the spirit form, then the outside part does not remain important anymore. Then your feelings for such things will completely change. When Shri Eknath went to Dwarka, he filled a pitcher with water. But then he saw a donkey almost dying of thirst and so he gave the water to him, which was meant to offer in the temple. People said, what are you doing? You have walked so far, barefoot to fill this water and now you have given it to this donkey? Eknath replied that my Krishna himself came down to drink this water. This subtle feeling of Bhakti, only a realized Soul can understand. To see the outside that how "We" took the pitcher and "We" offered it to God. Who are this "We". When this feeling of "We" is not there, the Param Chaitanya has done this work. When Eknath came on this earth, nobody understood him, people troubled him, but because he was the image of the Spirit and he was settled in Shiva, so he was of the form of Shiva. Such a person may be anything on the outside, but his Shiva State gives light even on the outside. The greatest thing is to be magnanimous. This magnanimity is the power of Shiva.. Shiva is so generous hearted that he gives boons even to Rakshasas knowingly. In the same way, the one who is firm in Shiva is very deep and at peace with himself. He will not say, but he knows everything.

The greatest power of Shiva is love. It is nirvajya love that is where there is no expectation. It is flowing. This power of compassion is so great that it surpasses everything. Similarly, in a self-realized person, the power of compassion grows and it is so ecstatic that you do not enjoy alone. His very nature becomes like this, that he becomes extremely powerful. His fear, doubts all vanish. He is able to do beautiful works in a very beautiful way. He also understands everything beautifully.

Some Sahaj Yogis will say on the face that you have a Bhoot. It should not be said like that. If you have to break some one's ego for ever, you just think about it that he is full of Ego, then the Param Chaitanya will itself break his Ego. But first of all, a realized soul has to think that now I have taken refuge in Shiva. I have taken refuge in my Spirit. Through my Spirit only will the Param Chaitanya do all this work, that is why I am not worried about anything. Who is my enemy? Who can kill me? I am living in the Divine. He is doing everything, so what am I doing. When one starts feeling this way, then one can say that we have recognized Shiva within. We understand the outer, our body etc. but we should understand this Shiva which is within us, which is the support of our entire power and which we can call Sat-Chitt-Ananda - we should believe in that Shiva.

**May God Bless You!**

---



# MARATHI TRANSLATION

## (Hindi Talk)

Scanned from Marathi Chaitanya Lahiri

आज शिवरात्री आहे. आणि आम्ही आज शिवाचे पूजन करणार आहोत. बाहेरील गोष्टीत आपण आपले शरीर व त्या संबंधीच्या अनेक गोष्टी, मन, बुद्धि, अहंकार आदि गोष्टींना चालना देत असतो. त्यावर प्रभुत्व मिळवू शकतो. त्याचप्रमाणे ज्या काही अंतरीक्षांतील गोष्टी आहेत. त्याही आम्ही ओळखू शकतो व त्याचा उपयोग करू शकतो. त्याचप्रमाणे या पृथ्वीमध्ये जे बुध् तत्व आहे आणि या पृथ्वीत जे निर्माण झाले आहे ते सर्व आम्ही उपयोगांत आणू शकतो. त्याचे सारे प्रभुत्व आम्ही आमच्या हातावर घेऊ शकतो. परंतु हे सर्व बाहेरचे आवरण आहे. आम्ही आंतमध्ये आहोत. जो आमचा आत्मा आहे तो शिव आहे. बाहेरील सर्व गोष्टी नश्वर आहेत. जो जन्म घेणार त्याला मरण आहेच. जो उत्पन्न होतो त्याचा विनाश होतोच. परंतु आत्म्याच्या आतमध्ये जो आत्मा आहे, जो शिव आहे तो त्या सदाशिवाचे प्रतिबिंब आहे. तो अविनाशी, निष्काम व स्वच्छंद आहे. तो कोणत्याही गोष्टीस लिप नाही. तो निरंजन आहे. त्या शिवाची प्राप्ती झाल्यावर आम्ही त्या शिवाच्या प्रकाशांत चमकू लागतो. आम्ही हळूहळू संन्यास घेऊ लागतो. बाहेरचे आवरण जसेच्या तसेच राहते. परंतु आंतमध्ये जो आत्मा आहे तो अचर, अतूट व अविनाशी आहे. तो नेहमी आपल्याच ठिकाणी असतो. आत्मसाक्षात्कार मिळाल्यावर आमचे जीवन हे भव्य, विभ्य व पवित्र असे जीवन बनते. म्हणून मनुष्यमात्रासाठी आत्मसाक्षात्कार मिळविणे अत्यंत आवश्यक आहे. त्याशिवाय मानवात संतुलन येत नाही. त्यामध्ये सारे प्रेम निर्माण होत नाही व त्यामध्ये सारी सामुहिकता येत नाही व त्याला सत्त्याची ओळख पटत नाही. ते सारे ज्ञान शुध्द ज्ञान होऊन जाते. जिला आपण विद्या म्हणतो. ती फक्त या आत्म्याच्या प्रकाशातच ओळखता येते. जेव्हा मनुष्य आत्म्याच्या प्रकाशात उजळून निघतो तेव्हा त्याची दृष्टीही निरंजन होऊन जाते. तो फक्त बघत असतो. कोणतीही वस्तू पाहिल्यावर त्यामध्ये कोणतीही प्रतिक्रिया उमटत नाही. तो फक्त पहातो व पाहिल्याबरोबर त्याला त्या वस्तूचे पूर्ण ज्ञान होते. आत्मसाक्षात्कार मिळाल्यावर जो पूर्ण एकरूप होत नाही तो नेहमी स्वतःबद्दलच विचार करीत असतो. मी आज कोणते जेवण घेऊ? कोणाच्या घरी चांगले जेवण मिळाले होते? आज कोणी आमची जेवायची सोय करील काय? आज कोठे जेवायला जायला पाहिजे? याचाच तो विचार करीत असतो. कोणत्या ठिकाणी माझे स्वागत होईल? कोणत्या ठिकाणी लोक मला मान देतील? कोणत्या सभेला जाऊन मला मान मिळेल? दुसरा माणूस असा विचार करील की, कोणते काम केले म्हणजे मी खूप पैसा जमवू शकेल? माझेजवळ खूप पैसे येऊ शकतील. जगातील सर्व संपत्ती मी मिळवीन व सर्व जगाला मी ठीक करील. तिसरा मनुष्य असा विचार करील की, मला किती मुले आहेत? व त्यांच्यासाठी मला काय करायला पाहिजे. तसेच त्या मुलांच्या मुलासाठी मला काय करायला पाहिजे. तसेच माझे नातेवाईक आहेत त्यांचेसाठी मला काय करायला पाहिजे? अशाप्रकारचे विचार जो करीत असतो त्याचे फक्त स्वतःकडे लक्ष

असते. चौथा माणूस असा विचार करील की, मी कोठे आहे ? समाजामध्ये माझे स्थान कोठे आहे ? एकाद्या गोष्टीपासून मला काय फायदा मिळणार आहे ? मी आज कोणते कपडे घालू ? आज मी कोणाला कशाप्रकारे प्रभावित करू ? मी आज कोणती गोष्ट करू की, जीव्यामुळे सगळे लोक आश्चर्य करतील. मी आज कोणती युक्ति शोधून काढू की जीव्यामुळे मी खूप मोठा हुशार माणूस आहे असे लोक म्हणतील. दुसरा जो आहे तो माणूस सर्वासमोर नम्रतापूर्वक पुन्हा पुन्हा लवून नमस्कार करील कारण मी फार नम्र आहे. मी सगळ्यांशी आदराने वागतो. मी सुसंस्कृत आहे असे त्याला दाखवायचे असते. कोणी तिसरा माणूस असे म्हणेल की, मी विद्वत सभेमध्ये जाऊन वादविवाद करीन. मी खूप पुस्तके वाचीन त्यामुळे माझी बुद्धि प्रगल्भ होईल. मी असा बुद्धिमान होईल की, "हा किती मोठा लेखक आहे, किती मोठा वक्ता आहे." असे लोक म्हणू लागतील. अशाप्रकारे दुसरा कोणी आपल्या संगीताचे बाबतीत विचार करतो. कोणी आपल्या कलेबाबत विचार करतो. तर कोणी उद्याच्या गोष्टीबद्दल विचार करित असतो. प्रत्येक बाबतीत मनुष्य स्वतःबद्दल विचार करित असतो की, माझी प्रगती कशी होईल त्यापासून मला काय मिळेल ? बरीच माणसे समाजकार्यही करतात. ज्याप्रमाणे एकाद्या बुडणा-या माणसाला वाचविण्यासाठी एखादा पाण्यात उडी घेतो तेही त्याच्या आतमध्ये मी आहे हे जाणूनच. माझ्यामध्ये मी आहे तसा त्या बुडणा-या माणसामध्येही आहे हे समजल्यामुळे तो त्याला वाचवितो. त्यापेक्षाही छान काम मनुष्य करित असतो. तो आपल्या देशासाठी फार त्याग करित असतो कारण हा माझा देश आहे. माझा देश सुखी व्हायला पाहिजे या विचाराने त्याच्यामध्ये भूयता येऊ लागते. महानता येऊ लागते. दुसरा एखादा असा विचार करील की, माझी जी कला आहे ती अशा रितीने विक्रीसत व्हावी की सा-या जगात माझ्या देशाचे नाव व्हावे. अशा रितीने मनुष्य स्वतःला सामुहिकतेमध्ये आलेला पाहून खूष होतो. परंतु या सर्व गोष्टीत मला विजय प्राप्त व्हावा ही अपेक्षा असते. माझे यश पाहून लोकांनी आपली वाढवा करावी ही गोष्ट अपेक्षित असतेच. त्यामुळे तो सुख आणि दुःखाच्या फे-यात फसून जातो. आपले नाव चोठेकडे छापले जावे, लोकांनी आपला मानसमान करावा अशी त्याची अपेक्षा असते. कोठेही गेलो तरी लोकांनी आपला आपमान करू नये, कोणीही आपणास कमी लेखू नये. एखादा कितीही मोठा संयोजक असला व तो आत्मसाक्षात्कारी नसला तर त्याच्यामध्ये भीषणा अहंकार येतो. त्याचे कायसिद्धि कितीही मोठे झाले तरी त्याचे चित्त अहंकारावरच केंद्रित होते. त्याच्या कार्याकडे त्याचे लक्ष जात नाही.

परंतु जर आपण आपल्या आत्म्याशी एकरूपता प्राप्त केली तर आपण वेगळ्या पद्धतीने विचार करू लागतो. प्रत्येक गोष्टीचा उपयोग समाजासाठी कसा होऊ शकेल, जगासाठी कसा होऊ शकेल याचा अंतरीक विचार करू लागतो. अशा लोकांसाठी काय करता येईल याबद्दल सर्व विचार आपल्यामध्ये बदल घडवितात. एखाद्या झाडाकडे लक्ष गेल्यास परमेश्वराने किती सुंदर वृक्ष बनाविला आहे असे विचार मनात येतात. मी ही असा सुंदर असतो व सावली देणारा असतो तर कितीतरी लोक माझ्या सावलीत येऊन बसले असते. परंतु मी असा नाही. मी सुद्धा असा सुंदर व्हायला पाहिजे. त्या झाडाची स्तुति करताना तो गाण्यात मग्न होतो.



हिमालय समोर दिसला तर हिमालयाची स्तुति गात राहिल. परंतु जो आत्मनिष्ठ नसतो, जो मनुष्य आपल्या आत्म्याला ओळखत नाही तो नेहमी स्वतःचीच स्तुति करीत असतो. मी हिमालयावर गेलो होते. मी तेथे अशाप्रकारचे काम केले. हिमालयात माझे थडगे बांधा व त्यावर माझ्या देशाचा झेंडा लावा. अशाप्रकारे दोन तऱ्हेच्या व्यक्ती असतात एक व्यक्ति आहे ती आत्मसाक्षात्कारी आहे ती आत्म्याच्या प्रकाशात आपल्या सगळ्या गोष्टीकडे दृष्टी टाकताना व्यापकता येते. तसेच हे काम केल्यावर माझे नाव वाढेल. लोक माझे यशोगत करतील अशी त्याच्या मनाची धारणा होत नाही कोणी त्याला मारले, त्रास दिला, छळ केला अगर काही वाईट केले तरी तो त्या गोष्टीबद्दल कधी वाईट वाटून घेत नाही. जसे आपण पहातो की, जेव्हा येशू ख्रिस्तांना सुळार चढविले गेले. सुळार चढताना त्यांनी एक प्रार्थना केली की, "हे जगादीश, आपण काय चुका करीत आहोत हे या लोकांना समजत नाही. तू त्यांना क्षमा कर" अशा तऱ्हेने जो आत्मसाक्षात्कारी असतो तो निस्पृह असतो. कोणत्याही गोष्टीबाबत त्याच्या मनात संदेह असत नाही. जी गोष्ट होणार आहे ती केलीच पाहिजे. एखादी गोष्ट ठीक झाली नाही तरी ते ठीक झाली असे समजतो. कोणत्याही प्रकारच्या सुखदुःखाचे स्मरण करण्याची अपेक्षाही करीत नाही असा माणूस सुख दुःख यांच्या फेऱ्यात सापडत नाही. सुख दुःखात तो समरस होऊ शकतो. फसलेही दुःख झाले तरी तो ते पहातो व सुख आले तरी तो एकच दृष्टीने पाहू शकतो. सुखदुःख हा दिवसरात्र यांचा फेरा आहे असे तो समजतो. कारण तो स्वतः आनंद सागरात स्थिर असतो. कारण आत्मा हा आनंदाचा द्वारा आहे. आत्मा कोणत्याही गोष्टीची लालसा करीत नाही व ती लालसा निर्माणच होत नाही त्याला आपल्या मनावर कधीही नियंत्रण आणवे लागत नाही. मन व इंद्रिये यांचेवर ताबा ठेवावा असे म्हणतात. परंतु ती संपूर्ण ताब्यात आलेली असतात. एखादी वस्तू आपणास पाहिजे त्यासाठी प्राण वेचण्याची वेळ येत नाही. तसा अडकारही खिलक राहत नाही.

काही लोक असे असतात की, ते एखादी वस्तूच्या प्रलोभनामुळे जशी काही ती वस्तू म्हणजे अगदी जीवन सर्वस्व आहे असे समजून त्यापाठमागे पळत सुटतात. जर ती वस्तू मिळाली तर दुसऱ्या वस्तूसाठी पळत सुटतात आणि जर ती वस्तू मिळाली नाही तर माझे जीवनच संपले असे समजून फार दुःखी होतो. अशा माणसाचे चित्त बाह्यात्कारी असते. त्याचे चित्त ज्या ज्या ठिकाणी पोहोचते ते स्वतः कार्यन्वित होते.

चित्त ही ब्रम्हदेवाची देणगी आहे. परंतु जेव्हा ब्रम्हदेव अगर ब्रम्हदेवाचा फक्त ब्रम्ह राहातो त्या वेळेला असे चित्त इतके प्रभावशाली होते. इतके प्रेममय होते, इतके जाणकार होते आणि इतके दक्ष होते की, ते आपले कार्य अतिशय सुलभीरतीने करून घेते. विशेष म्हणजे अशा माणसाचे चित्त परमचेतन्याशी एकरूप होते आणि जेव्हा अशी स्थिती येते तेव्हा परमचेतन्यच हे कार्य करीत असते. जगातील कोणतेही काम ही ब्रम्हशक्ति, हे परमचेतन्य करीत असते. आणि जे काम मनुष्य करीत असतो तो मी हे काम करीत आहे असे त्यावेळी समजत नाही. त्याची त्याला आठवणसुध्दा होत नाही. हे सगळे घडत आहे असाच विचार तो करीत असतो. यालाच अकर्मात उतरणे असे म्हणतात. कारण हे सारे कार्य परमचेतन्य करीत आहे व मी फक्त माध्यम आहे.

आत्म्याच्या प्रकाशाने हे सर्व होऊ शकते हेच अकर्मात उतरणे होय. नाहीतर मनुष्य असे म्हणतो की, हे सगळे कार्य मी करतो व परमेश्वरावर सोडून देतो. पण तो सोडू शकत नाही. खरी गोष्ट अशी आहे की, परमचैतन्य अतिशय सुगम रितीने हे सर्व कार्य करीत असते इतके सुंदर त्याचे कौशल्य आहे. या सगळ्या गोष्टींची रचना पाहून मनुष्य आश्चर्यचकित होतो. आणि जेव्हा मनुष्य धर्मापूर्वक आपल्या विशाल हृदयापासून काम करतो ते सफल होते. आणि लोक माझेकडे येऊन सांगतात की, श्री माताजी, मोठा चमत्कार झाला मी फक्त प्रार्थना केली आणि काम झाले. श्री माताजी, हा मोठा चमत्कार झाला. आम्ही कार्य करीत नसून परमचैतन्य काम करीत असते. ज्याप्रमाणे चांदीपासून दागिने बनावितात त्याप्रमाणे पलावा निर्जीव वस्तूपासून दुसरी वस्तू निर्माण करण्याचा आम्ही प्रयत्न करतो व पार मोठे काम केले असे आम्ही समजतो. आम्ही फक्त एका निर्जीव वस्तूपासून दुसरी निर्जीव वस्तू तयार करतो परंतु सर्व जिवंत कार्य परमचैतन्यच करीत असते. आम्हाला ही परमचैतन्याची जी देणगी मिळालेली आहे व त्यापासून आम्हाला जो अनुभव मिळाला आहे हे सर्व आत्मसाक्षात्कारामुळेच आहे. कारण हे परमचैतन्य जे आहे ते आदिशक्ति आहे. शिवाची इच्छाशक्ति आहे व तिचा हा प्रकाश आहे. या परम चैतन्याच्या आशिर्वादामुळे आम्ही सारे कर्म करतो. ज्यांच्यामध्ये परमचैतन्य पेटित झाले आहे से लोक प्रभावशाली बनू शकतात.

परंतु मी हे करीत आहे अशी भावना जर मनात आली व मी हे केले मी हे करू शकितो अगर पलावी गोष्ट जबरदस्तीने केली तर आपल्या आतमध्ये पूर्णपणे आत्म्याचा प्रकाश आलेला नाही असा त्याचा अर्थ होतो. आपण ज्यावेळी कोणतेच काम करीत नसतो त्यावेळी ते आपोआप घडत असते म्हणजे आपण अकर्मात आलेले असतो.

पलावा कब जर मी प्रकाश देत आहे असे म्हणाला तर ती खोटी गोष्ट आहे. जे लोक आत्मसाक्षात्कारी आहेत त्यांच्या आतमध्ये परमचैतन्य कार्य करीत असते. ज्याने आपणास निर्माण केले व वाढविले तसेच शरीरादि गोष्टी ज्या बनल्या आहेत त्या परमचैतन्याच्या कृपेनेच बनलेल्या आहेत. त्यानंतर आपण आज मनुष्य बनून आत्मसाक्षात्कारी बनलो हा सुधा त्या परमचैतन्याचा आशीर्वाद आहे. तेव्हा अशा माणसामध्ये अहंकार कसा येऊ शकेल? मी काहीच करीत नाही एवढेच तो जाणू शकतो.

कृष्णाच्या मुरलीने जर म्हटले की, माझ्यातून मधूर आवाज निघतात असे लोक का म्हणतात? मी तर पोकळ आहे. पोकळपणा म्हणजेच अहंकाररहित अकथा होय. ती अहंकाररहित अकथा ज्यावेळी आपल्यामध्ये पूर्णपणे प्रस्थापित होते त्यावेळी आम्ही हे कार्य करतो, ते कार्य करतो असा जो विचार येतो तो किती दुःखकारक असतो, किती त्रासदायक असतो हे समजून येते. मी हे काम करीत होतो व मी हे काम केले पण त्यापासून अपयश आले तर मी दुःखी होतो. मी हे काम केले आणि त्यात मला मोठे यश मिळाले या विचाराने आपली बुद्धि अजून सराबोर होते. परंतु हे काम मी केले नाही, ते काम करणारे परमचैतन्य आहे, ही सारी त्याची



कुशलता आहे तेव्हा जे घडेल ते ठीक झाले असे समजावे.

पक्षाघात वेळी आपण रस्ता चुकून भलत्याच जागी पोहोचलो तर आपण त्यावेळी रस्ता चुकला पार मोठी चूक झाली असे कोणी म्हणणार नाही. परंतु आत्मसाक्षात्कारी मनुष्य येथून जाणे आवश्यक होते म्हणून या वेगळ्याच रस्त्यावर आलो असा सरळ विचार करतो म्हणून त्याचा रस्ता चुकण्याचे दुःख होत नाही. त्याला काही त्रास होत नाही. आत्मसाक्षात्कारी माणसाला तुम्ही महालात ठेवले तर तो तेथे राजासारखा राहिल. तसेच तुम्ही त्याला जंगलात ठेवले तरी जंगलातसुद्धा तो आनंदाने राहिल. तो काहीही तक्रार करणार नाही कारण परमचेतन्यानेच मला इकडून तिकडे नेले हे तो ओळखतो. त्याला तुम्ही मारले अंगर हार घातला तरी या देन्ही गोष्टी ता सारख्याच समजतो. त्याला त्यात काही फरक वाटणार नाही. कारण आत्मा जो आहे तो कशालाही चिकटत नाही.

जेव्हा तुम्ही माझी प्रतिष्ठा मी मोठा माणूस, मी लहान माणूस अशा प्रकारच्या गोष्टींना चिकटला तर पक्षाघात माझ्याशी असे का वागला? असा विचार केला तर तुम्ही अहंकारापासून अलिप्त होऊ शकत नाही. आत्मसाक्षात्कारी मनुष्य तो कोठेही असला तरी त्याला लहानमोठेपणाची जाणीव होत नाही. तो आपल्या आत्म्यामध्ये आनंदात रहातो. ज्यावेळी बोलायचे त्याचवेळी तो बोलेल. ज्यावेळी आवश्यकता नसेल तेव्हा तो बोलणार नाही. कोणी काही सांगितले तर तो ते ऐकून घेतो. कोणी काही ज्ञानाची गोष्ट सांगितली तर ती ऐकून घेतो व अज्ञानाची गोष्ट सांगितली तरी ती ऐकून घेतो. लोकांच्या बाबतीत गुणदोषांचे वर्णन करील पण मला याचा तिरस्कार वाटतो असे म्हणणार नाही कारण तिरस्कार करणे हे एक पाप आहे आणि म्हणूनच आत्मसाक्षात्कारी माणसाकडून पाप होत नाही. तो जे करील ते पुण्य असेल.

देवी भूतांना मारते असे समजल्यास ते काही पाप नाही. भूतांना मारले नाही तर पाप फैलावेल. तेव्हा ती आपल्या कामापासून परावृत्त होत नाही कारण भूतांना परमचेतन्य मारीत असते. मी ईश्वराशी कुठे मारीत असते, परंतु परमचेतन्याची ग्वाही देण्यापूर्वी त्यामध्ये एकरूप झाले पाहिजे, नाहीतर आपण परमचेतन्य सांगितले पण ते काही तुमच्या विद्यात बसलेले नाही. जेव्हा आपणामध्ये ती स्थिती येते व आपण त्या उच्च स्थितीला पोहोचतो त्या ठिकाणी आपण परमचेतन्याशी एकरूप होतो. नंतरच पक्षाघात गोष्ट चुकीची असली तर आपण तसे स्पष्टपणे बोलू शकता. मोठ मोठ्या साधुसंतांनी समस्त धीटपणे सांगितले पण ते घाबरले नाहीत. सत्य बोलण्यासाठी सोंकीटसला विष दिले गेले. त्याला अनेक प्रलोभने दिली काहीही केले तरी त्याने जे सत्य होते तेच सांगितले. कारण परमचेतन्याकडून सत्यच बोलविले जाते. व ते सत्यनिष्ठ असते. त्याच्या बुद्धीला सत्य व असत्याची ओळख होती. कोण खोटा कोण सरा हे जाणत होती. बुद्धीवर आत्म्याचा प्रकाश आल्यावर सुबुद्धी बनते. कोण किती खोल पाण्यात आहे हे तो एका नजरेत ओळखतो. आणि त्याला परमचेतन्य सर्वकाही सांगते. म्हणून परमचेतन्य भिळविणे हे महत्वाचे ठरते. आणि त्याचा उपभोग आम्ही घेऊ शकत नाही. त्याचा उपभोग परमेश्वरच घेत असतो. आपण फक्त त्याची तीला पहात असतो. तेव्हा आपण पक्षाघात कसूचा उपभोग घेत असतो.

एखादा अध्यापक जो असतो तो या आत्म्याच्या प्रकाशाचे, त्याच्या कार्याचे, तसेच त्याच्या लीलांचे सर्व प्रकारचे विज्ञान आहे. त्याचे शास्त्र आहे. जर ही गोष्ट नीट समजून घेतली तर सृष्टीचे शास्त्र हे आत्म्यापासून येत असते असे समजून येईल. आणि जोपर्यंत हे सर्व शास्त्र एकदम बेकार आहे कारण त्याच्यामध्ये फारच थोडे विज्ञान आहे की जे आपणास जड वस्तूंच्या बाबतीत आपणास जाणकारी देते. त्यामध्ये संतुलन असत नाही. सामाजिकता असत नाही. त्यामध्ये मनुष्यता असत नाही. आणि त्यात प्रेम नाही. त्यात कला नाही. त्यात कष्ट नाही आणि त्यात आदर नाही ज्यामध्ये आत्मा आहे अशी एकही चीज नाही. एखाद्या मशिनसारख्या सर्व गोष्टी घडत असतात. सर्व विज्ञान जाणण्यासाठी माणसाला आत्म्याचा प्रकाश पाहिजे. आत्म्याच्या प्रकाशामुळे शास्त्राची सर्व उपांगे आपण समजू शकतो. जे आजपर्यंत लोकांना उलगडून पडता आले नाही. आत्म्याच्या प्रकाशामुळे विज्ञानाचा मार्ग जाणून घेता येईल. ज्याने सर्व जाणून घेतले आहे त्याने दुस-यास सर्व काही सांगण्याची जरूरी नाही कारण सगळ्यांजवळ ते समजण्याची कुवत नाही. ज्यावेळेस संधी येईल त्यावेळेस समजून दिले पाहिजे. त्यामुळे सहजयोगात सुद्धा पुष्कळ लोक वेतागून जातात. माझा बाप सहजयोगात नाही. माझी आई, माझा भाऊ, इ. सहजयोगात नाहीत. नसले तर नसले, तुम्ही तर आहात ना ? तुम्ही तुमच्याबरोबर राहा. मनुष्य जितका आपल्याबरोबर आनंदात राहतो तसा तो कोणाच्याही बरोबर इतका आनंदात राहत नाही कारण हे सर्व आपल्या आंतच आहे. त्यासाठी यात हे नाही, त्यात ते नाही अशा त-हेच्या गोष्टींचा विचार करणे ठिक नाही. हृदयाचे कपाट पूर्ण न उघडल्यामुळे आपल्या मनात असे विचार येतात. जे आपले बाप, भाऊ, बहिणी आत्मसाक्षात्कारी आहेत त्यामुळे काही प्रश्न उद्भवत नाही. परंतु अजून जे अर्धे अंधारात आहेत व अर्धे प्रकाशात आहेत त्यांच्या बाबतीत प्रश्न निर्माण होतो आणि माझा भाऊ एखाद्या गोष्टीत फसला आहे असे विचार येतात. कोणावरही जबरदस्ती करता येत नाही. ते आपोआप सहजयोगात येतील अशा त-हेचा विचार आत्मसाक्षात्कारी करीत असतात. तो सर्वांना पहात असतो आणि आनंद लुटत असतो. माणसांच्या वेडेपणात सुद्धा तो आनंद मानीत असतो व विद्वत्तेत सुद्धा तो आनंद मिळवू शकतो. कोणी मूर्खपणाच्या गोष्टी केल्या असतील तर त्याच्यातूनही त्याला आनंद मिळतो. कोणी समजूतदारपणाच्या गोष्टी केल्या तर त्यातूनही तो आनंद मिळवू शकतो. सगळ्या गोष्टी मध्ये त्याला आनंदाचा एक प्रवाह दिसत असतो. एखादा मनुष्य विक्षिप्तपणाने वागत असेल तर तो त्याला एक नाटक आहे असे समजतो. जेव्हा एक आत्मसाक्षात्कारी माणूस कोणी माणसाला पडतो तेव्हा तो म्हणतो, वाडवा! कोण कसा चढत आहे आता तर तो जादा वाढला. आता तो माझ्या चक्रामध्ये होता आणि आता तो सहस्त्रापर्यंत चढला. तो कोणी माणूस पाहून आत्मसाक्षात्कारी घाबरत नाही. त्याच्यामध्ये जी दृष्टी आलेली आहे तिला साक्षी स्वरूपातील निरंजन दृष्टी म्हणतात आणि साक्षी स्वरूपात तो समाजाचे इतके सुंदर विवरण करतो की ते पाहून हसू येईल. अतिशय गंभीर गोष्टीमध्ये आपण समजू शकाल की पुष्कळा गोष्टी आपल्याला गंभीर वाटतात परंतु त्यामध्ये एक मोठा संदेश लपलेला असतो, आपल्याला जर उद्विग्नता आली तर ती आत्मसाक्षात्कारी माणसाला परमचेतन्यामुळे त्याची लगेच स्मरण लागते आणि आतताईपणाने जो काम करील तो संपून जातो. ती उद्विग्नता सुद्धा एक प्रकारे



कार्यान्वित होते. एखादी आत्माददायक गोष्ट असेल तर ठीक आहे. परंतु काही अशाही गोष्टी असतात की त्यापासून उद्दिग्धता येते. आणि असे कार्य का होते याचा मनुष्य विचार करू लागतो. असे होता कामा नये. त्याचा लोकरच इलाज केला जाईल.

जेव्हा मी प्रत्यक्ष रशियाला गेले होते, तेव्हा तेथे सात दिवस राहिले होते. आणि परत आले. नंतर तेथे योगाचे एक शिबिर होणार होते. तेव्हा आमच्या घरातून असे सांगण्यात आले की आताच जाऊन आलात आणि आता परत दोन दिवसासाठी जाण्यात काय फायदा आहे? तेव्हा मी असे सांगितले की, माझे तेथे जाणे जरूरीचे आहे. कारण तेथे जो इस्टर्न ब्लॉक आहे तो तोडायचा आहे. कारण तेथून सगळे लोक येतील आणि त्यामधील जे लोक पार होतील ते लोक तेथे गेल्यावर परमचेतन्य आपले काम करील. मी फक्त तेथे पंचेचाळीस मिनिटे बोलले आणि पंधरा मिनिटात जागृती दिली आणि त्यानंतर ते लोक त्यांच्या देशात गेले व तेथून हे कार्य झाले. परमचेतन्याच्या कार्यासाठी आत्मसाक्षात्कारी लोकांची जरूरी आहे. आत्मसाक्षात्कारी लोकांच्या इच्छेनुसार परमचेतन्याचे कार्य होत असते. जर आपली इच्छा असेल तर कार्य जरूर होऊ शकते आणि आपल्या इच्छेमध्ये शुद्धता असली पाहिजे. ज्याच्यात शुद्ध इच्छा नाही ते स्वार्थी असतात व ते स्वतःबद्दलच विचार करीत असतात. कारण हे कार्य आत्म्याच्या बळावर होत असते आणि जो आत्मा जो आपला शिव आहे तो पूर्णपणे स्वच्छंद, निस्पृह, निराधार, निरंतर आणि नित्य असा आहे. म्हणून जो मनुष्य आत्मसाक्षात्कारी बनतो त्यामध्ये हे सारे गुण येतील.

आपल्या भोवती इतर गोष्टींचे आवरण असल्याने हे गुण आपल्या आत येत नाहीत. आपण राजा असा अगर दुसरे कोणी असा, आपण निस्पृह असतो. आतून आपण मुक्त असतो. आतून आपण कोणत्याही गोष्टीला लिप्त होत नाही. आपण अलिप्त असतो. आपण आतून कोणाचाही द्वेष करीत नाही. एखादी गोष्ट मिळविण्याची आपल्यात लातसा असत नाही. या सगळ्या बाहेरच्या गोष्टी आपोआप सुटल्या पाहिजेत. आत्म्याचा सगळ्यात मोठा प्रकाश असा असतो की, त्यामुळे आपणास काहीही प्रयत्न करावा लागत नाही. कोणाला बस करण्याची जरूरी नाही. ज्यावेळी आपण आत्मसाक्षात्काराच्या प्रकाशात उतरतो तेव्हा आपला आतला अंधार नष्ट होतो हा फार मोठा फायदा होतो. ज्यांना अजून हा फायदा मिळाला नाही त्यांनी आपला आत्मसाक्षात्कार पूर्णपणे फलदूष झालेला नाही असे समजावे आणि आत्मसाक्षात्कार पूर्णपणे फलदूष झाला असेल तर आमच्या जीवनात, आमच्या आसपासच्या समाजात, आमच्या सहजयोग्यांच्या समाजात, प्रत्येक ठिकाणी एक नवीन प्रकारचा मनुष्य तयार व्हावयास पाहिजे की जो आत्मस्वरूप आहे. ज्यामध्ये आत्म्याचा प्रकाश पसरलेला आहे आणि ज्यामध्ये शिवाचे दर्शन होते.

ज्यावेळी शिवाचे लग्न झाले तेव्हा ते अगोदर जसे राहात होते त्याच रूपात ते तेथे गेले, याचा अर्थ असा आहे की, आपल्यात एखादे शारीरिक व्यंग असले व आपल्या आत आत्म्याचा प्रकाश असला, आपले शारीरिक स्वरूप कसेही असले पण आत आत्म्याचा प्रकाश असला की शिव आपल्याला मानतात. ते निसंग आहेत. यामध्ये आमची दोन अंगे दिसतात. आम्ही विष्णूस्वरूप असून ते आमचे बाह्यभाग आहे आणि आतले अंग आहे ते

आमचे शिव आहेत. आणि त्या शिवासारखे आपण निस्पृह, स्वच्छंद आणि निरासक्त बनले पाहिजे. जर आम्ही आत्मा स्वरूप असलो तर बाहेरच्या कोणत्याही गोष्टीची आसक्ति आमच्या आत येऊ शकत नाही. बाहेरून तुम्ही श्रीकृष्ण बना अगर दुसरे कोणी बना, आतला जो शिव आहे तो आपल्या जागेवर स्थित राहातो. तेव्हा आपण आत्मस्वरूप होऊन जातो व बाह्य अंगाचे महत्व खिलक राहात नाही आणि तेव्हा सगळ्या गोष्टीबद्दलच्या आपल्या न्या भावना असतात त्या एकदम बदलून जातात.

श्री संत एकनाथ जेव्हा काशोला गेले होते तेव्हा त्यांनी एक कावड भरून गंगेचे पाणी घेऊन ते रामेश्वरला चालले होते. परंतु वाटेत त्यांनी एक तहानेने व्याकूळ झालेले गाढव पाहिले. ते मरण्याच्या अवस्थेत होते. ते पाहून एकनाथांनी कावडीतून आणलेले गंगाजळ त्या गाढवाला पाजले तेव्हा लोक त्यांना म्हणाले, "तुम्ही हे काय करता? इतक्या दूरवर पायी चालत येऊन आणलेले पाणी तुम्ही ह्या गाढवाला पाजले. तेव्हा ते म्हणाले, "माझा रामेश्वर पाणी पिण्याकरिता येथे उतरून आला". हा भक्तीचा जो सूक्ष्म भाव आहे तो एक आत्मसाक्षात्कारीच समजू शकतो. मी कावड घेऊन गेलो, पाणी आणून त्या गाढवाला पाजले हा बाह्य देखावा आहे. "मी कोण आहे" व काय करीत होतो ही भावना नष्ट झाली आणि परमचेतन्याने हे कार्य केले. या पागल दुनियामध्ये ते आले. त्यांना कोणीही ओळखले नाही. फक्त त्रास मात्र दिला. ते आत्मस्वरूप होते. ते शिवामध्ये स्थित होते. ते शिक्स्वरूप होते असा जो मनुष्य असतो तो बाहेरून कसाही असला तरी त्याची शिवस्थिती बाहेरून सुध्दा प्रकाशित होत असते. औदार्य ही सगळ्यात मोठी गोष्ट आहे आणि हे औदार्य ही शिवाची शक्ति आहे. यापासून हृदय इतके उदार होते की, शिवाने रत्नसांना सुध्दा वरदान दिले. ते सगळ्या गोष्टी जाणीत होते. अशा रितीने जो शिवामध्ये स्थित आहे तो आपल्यामध्ये मोठा समाधानी असतो. तो सर्वकाही ओळखतो सर्व काही जाणतो. तो सांगणार नाही सर्वकाही जाणीत असतो.

प्रेम ही शिवाची सगळ्यात मोठी शक्ति आहे. ज्यामध्ये व्याज घावे लागत नाही असे निर्व्याज प्रेम ही शिवाची शक्ति असून ती वाढत असते. शिवाची करुणेची शक्ति इतकी जबरदस्त आहे की, त्या करुणेला पाहून आपणसुध्दा आश्चर्यचकित व्हाल. अशात-हेने एका आत्मसाक्षात्कारी मनुष्याचा करुणेचा भाव वाढत जातो. आणि त्याची जी नशा चढते ती अशी नशा आहे की, एकटेपणात मजा येत नाही. अशाप्रकारे त्याची प्रवृत्ती अशी होऊन जाते की, तो अत्यंत शक्तिशाली बनून जातो. त्याच्या शंका व भीती संपून जातात आणि मोठ्या युवतीने तो पुष्कळ सुंदर कामे करू शकतो. आणि कोणत्याही गोष्टीची ओळख उत्तमप्रकारे करून देऊ शकतो.

एखाद्या माणसाला काही सहजयोगी "तुम्हाला भूत लागले आहे" असे सरळ सांगतात असे सरळपणे सांगू नये आणि कोणाचा अहंकार कमी करायचा असेल तर तुम्ही फक्त तो अहंकारी आहे असा विचार केल्यास परमचेतन्य त्याची व्यक्ती करत आणि त्याचा अहंकार कमी होऊन जातो. परंतु आत्मसाक्षात्कारी माणसाने असा विचार करायला पाहिजे की, "मी शिवामध्ये शरणागत आहे. मी माझ्या आत्म्यामध्ये शरणागत आहे आणि माझ्या आत्म्यामुळे हे परमचेतन्य कार्य करणार आहे. आणि त्यासाठी मला कोणत्याही गोष्टीची चिंता नाही.



माझा शत्रू कोण आहे. मला कोण मारू शकतो. मी तर परमचेतन्यातच असतो. सर्व काही परमचेतन्याच करीत असते. मी तर कोणतेच कार्य करीत नाही अशाप्रकारची जेव्हा आपली भावना होते तेव्हा आपण आत्म्या शिवाला ओळखते असे समजावे. आम्ही आमचे शरीर व इतर गोष्टी सर्वकाही जाणतो. परंतु आपल्या आतमध्ये असलेल्या शिवाला ओळखणे आवश्यक आहे. जो शिव आमच्या सा-या शक्तीचा आधार आहे, आम्ही ज्या शिवाला सच्चिदानंद म्हणतो त्या शिवाला आपण मानले पाहिजे. तुम्ही सर्वांना अनंत आशीर्वाद.